National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2026; 1(68): 147-150
© 2026 NJHSR
www.sanskritarticle.com

ललित
शोधार्थी, हिंदी विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय

Correspondence:
ललित
शोधार्थी, हिंदी विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय

भक्ति काल की संत परंपरा में घीसादास का योगदान

ललित

शोध सार:-
हिंदी साहित्य में भक्ति काल को स्वर्ण युग कहा गया है। प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से संत परंपरा को स्पष्ट करते हुए, विशेष रूप से संत परंपरा में घीसादास के योगदान पर विस्तृत रूप से चर्चा की गई है। संत परंपरा के संतों ने अपने विचारों को लोकभाषा में व्यक्त किया जिससे उनकी वाणी सीधे जनमानस तक पहुंची। इस पत्र के माध्यम से घीसादास के जीवन, व्यक्तित्व, सामाजिक चेतना, काव्य भाषा आदि के बारे में विस्तृत रूप से चर्चा की गई है और साथ ही यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि घीसादास जी ने अपनी वाणी के माध्यम से समाज को जागरूक करने का प्रयास किया है। घीसादास जी हृदय की पवित्रता पर बल देते हैं और कहते हैं कि सच्चे हृदय और प्रेम के द्वारा ही हमें ईश्वर का प्रेम प्राप्त होता है। वे अपनी वाणी के माध्यम से गुरु के महत्व पर भी प्रकाश डालते हैं। वे समाज में व्याप्त जाति प्रथा, बाह्य आडम्बर और कर्मकाण्डों का जमकर विरोध करते हैं। इस अध्ययन से यह भी यह स्पष्ट होता है कि संत घीसादास की वाणियाँ आज भी हमारे समाज में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं, क्योंकि इनकी वाणियों के माध्यम से समाज में नैतिक चेतना और सामाजिक समरसता को प्रोत्साहित किया। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि संत घीसादास ने भक्तिकाल संत परंपरा को समृद्ध करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। घीसादास की वाणियाँ भारतीय संत परंपरा की उस महान धारा का प्रतिनिधित्व करती हैं जिसने भारतीय समाज को प्रेम, सत्य, समानता ,आडंबर रहित जीवन जीने की दिशा में आगे बढ़ाने का कार्य किया।

बीज शब्द – घीसादास, संत परंपरा, निर्गुण भक्ति, गुरु महिमा, लोक चेतना, सामाजिक चेतना, लोक भाषा आदि।

प्रस्तावना:-
हिंदी साहित्य के इतिहास में निर्गुण के ज्ञानामार्गी भक्तों को संत कवि कहा जाता है। इन संतों के द्वारा प्रतिपादित काव्यधारा को संतकाव्य धारा कहा जाता हैं। इसका संबंध निर्गुण भक्ति से है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इस काव्यधारा को ज्ञानाश्रयी शाखा कहा है। भक्तिकाल के निर्गुण कवि अधिकांश निम्न जाति से सम्बन्ध रखते थे। इन संतों ने अपनी उपासना का आधार ब्रह्म को बनाया है। मध्यकाल केवल राजनीतिक उथल - पुथल का समय नहीं था, बल्कि यह वैचारिक क्रांति और आध्यात्मिक पुनर्जागरण का स्वर्ण युग भी था। इसी समय निर्गुण संत परंपरा के कवियों ने समाज की जड़ताओं, जातिगत भेदभाव और बाह्य आडंबरों पर सबसे कड़ा प्रहार किया। इन संतों पर वैष्णव संप्रदाय, इस्लाम, नाथ, बौद्ध, सिद्ध आदि का प्रभाव हमें स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। संत कवियों ने इस्लाम के प्रभाव से एकेश्वरवाद, बौद्ध एवं वैष्णव से अहिंसावाद, शंकराचार्य से अद्वैतवाद, नाथों से शून्यवाद, योगसाधना आदि को ग्रहण किया और इन सभी तत्वों ने संत काव्य के दार्शनिक आधार को तैयार करने में योगदान दिया।

संत कवियों की परंपरा का आरंभ हमें 12वीं शताब्दी में जयदेव से देखने को मिलता है। इनके निर्गुण भाव से संबंधित पद आदिग्रन्थ में संकलित है। इसके बाद हमें 13- 14वीं शताब्दी में संत ज्ञानेश्वर, नामदेव और तुकाराम इस परंपरा को आगे बढ़ाते हुए दिखाई पड़ते हैं। इन सब के बाद कबीरदास के गुरु रामानंद का स्थान आता है। परंतु हिंदी में संत काव्य की परंपरा का सूत्रपात का श्रेय कबीरदास जी को ही जाता है। कबीरदास के बाद इस परंपरा में आगे चलकर अनेक पंथों की स्थापना हुई। कबीरदास के अनुयायियों ने कबीर पंथ की स्थापना की। इसके बाद दादू पंथ, नानक पंथ, मलूक पंथ आदि पंथ भी समय के साथ-साथ अस्तित्व में आते गए। कबीर से शुरू हुई संत काव्य परंपरा में रविदास, दादूदयाल, गुरु नानक, सुंदरदास, गरीबदास, धर्मदास, जगजीवन साहब, जम्भदास, मलूकदास, हरिदास, चरणदास आदि संत कवि हमें देखने को मिलते हैं। इसी परंपरा में हमें आगे चलकर संत कवि घीसादास दिखाई पड़ते हैं।

संत घीसादास का जन्म संवत् 1860 वि. में मेरठ जनपद के खेकड़ा नामक गांव में हुआ था। घीसादास जी जुलाहा जाति से सम्बन्ध रखते थे। इसका वर्णन हमें उनकी स्वयं की वाणियों में भी दिखलाई पड़ता है।

घीसा सन्त शरण सतगुरु की, रेज़ा बुणते भाई।

हम अहैं जुलहदी रहैं अलहदी-बहदा मेटैं जाते हैं।।[1]

प्रेम मगन होय रेज़ा बुनते, शब्द सूत सुलझाते हैं।[2]

संतों की वाणियों में हमें रहस्यवाद भी दिखाई पड़ता है। वे अपनी बातों को प्रतीकों के माध्यम से प्रस्तुत करते थे। लौकिक वस्तुओं में अलौकिक देखना उनकी दिव्य दृष्टि थी। इसी तरह घीसादास भी लौकिक जगत में अलौकिक रेज़ा बुनने की बात की। इनके एक परम शिष्य जीताराम जी भी हुए हैं। वे अपने एक पद में इस बात का उल्लेख करते हैं। कि घीसादास जी जुलाहा जाति से सम्बन्ध रखते थे।

मेरे मन मान्या है सत्गुरु का नाम,

लोग कहैं जुलाहा जुलाहा, मेरे दरश रहया राम।[3]

प्रस्तुत पद में जीताराम जी कहते हैं कि मेरे मन ने हमेशा से ही सतगुरु का नाम लिया है। लोग इन्हें जुलाहा कहते हैं परंतु मेरे गुरु अर्थात् घीसादास जी ने ही मुझे अलौकिक(राम) के दर्शन करवाए हैं। घीसादास जी कबीरदास को अपना गुरु मानते थे और निर्गुण भक्ति के उपासक थे। वे अपनी साखी में स्वयं कहते हैं कि-

सकल शरीरों रम रहे, अवगत सत्य कबीर।

सत्यरूपं, सतगुरु मिले, नीर क्षीर के तीर।।'[4]

घीसादास के शिष्य जीतादास अपने गुरु के प्रति श्रद्धा भाव रखते हैं और कहते है कि उनके द्वारा ही मुझे ज्ञान की प्राप्ति हुई है। वे अपनी गुरु प्रणाली को इस रूप में अभिव्यक्त करते हैं-

केवल रूप किया प्रकाश, यह यश गावें जीतादास।

पाए प्रसाद भए आनन्द, रक्ष करें गुरु रामानन्द।।

पाए प्रसाद भए मन थीर, रक्षा करें गुरु सत्य कबीर।

पाए प्रसाद भए अचिंत, रक्षा करें गुरु घीसा संत।।[5]

बाल्यकाल से ही घीसासाहब अलौकिक प्रतिभा का परिचय देने लग गए थे। 14 वर्ष तक तो इनका प्रभाव काफी विस्तृत हो चुका था। ये अपने विचारों के माध्यम से जनता को समझाने का प्रयास कर रहे थे। इसी कारण से गांव के निवासी नानू भक्त, सुखलाल तथा अहीर पट्टी के कई आदमी इनके भक्त हो गए थे। आडंबरों का विरोध करने के कारण घीसादास को अपने ही गांव के ब्राह्मण लोगों से विरोध और सामाजिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा।

कबीर दास की तरह घीसादास जी ने भी स्वयं कोई ग्रंथ नहीं लिखा था और न ही किसी अन्य से लिखवाया था। घीसादास जी समय-समय पर ज्ञान के माध्यम से वाणी और सबद का उच्चारण करते थे। उन्हीं के साथ रहने वाले शिष्यों व अन्य संत उनके सबद और वाणी को लिखकर याद करते थे। उनके द्वारा कुछ वाणियों का संग्रह 'सचित्र ग्रंथ साहिब' में प्रकाशित हुआ है। 'सचित्र ग्रंथ साहब' में संकलित वाणी और पद आदि मौखिक या लिखित रूप से संरक्षित थे। इन सभी को संकलित करके 'सचित्र ग्रंथ साहब' का प्रकाशन किया गया। इसके अतिरिक्त हमें तीन और अन्य ग्रंथ मिलते हैं जिनमें घीसादास जी की वाणी संकलित है:-

1. श्री ग्रंथ साहेब - महंत अचलदास।

2. वाणी महाराज ईश्वरदास जी की - महंत निरंजनदास।

3. श्री घीसा संत जी का जीवन चरित्र एवं वाणियाँ - महंत जितेंद्रदास।

'सचित्र ग्रंथ साहब' में घीसादास जी की वाणी को संकलित किया गया है। वाणी को तीन भागों में बाँटा गया है:-

1. साखी भाग

2. वाणी भाग

3. सबद

संत काव्य धारा के अधिकांश कवियों ने सतगुरु की महिमा का बखान किया है। संतों ने गुरु को ईश्वर से भी ऊँचा स्थान दिया है। कबीर के पदों में भी हमें इसका उल्लेख दिखाई पड़ता है-

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागू पाय।

बलिहारी गुरु आपने, गोविन्द दियो बताय।।

घीसा गुरु ईश्वर पर ब्रह्म, सतगुरु सब का देव।

गुरु बिन पार न पावई, तातें शरणा लेव।।[6]

इसमें बताया गया है कि गुरु की शरण के बिना हम इस भव रूपी सागर से पार नहीं हो सकते। जो व्यक्ति अपने गुरु की सच्चे हृदय से सेवा करता है, वह सांसारिक बंधनों से छूट जाता है और ब्रह्मा में लीन होकर मोक्ष अर्थात् ज्ञान को प्राप्त कर लेता है। ईश्वरदास जी ने अपने गुरु घीसादास की महिमा का बखान करते हुए कहते हैं कि-

घीसा गुरुकी सेवा जो करै, हृदय ध्यान लगाय।

काल जाल से छूट ही, सत्य धाम को जाय।।[7]

इसमें शिष्य गुरु के बारे में बताता हुआ कहता है कि घीसादास जी की जो भी व्यक्ति हृदय से सेवा करता है, वह जन्म- मरण के बंधनों से छूट कर सत्य धाम को प्राप्त हो जाता है अर्थात् आत्मा और परमात्मा का मिलन हो जाता है।

घीसा जग में आयकर, बहुत हँसाये लोय।

ऐसी करनी कर चलो, पीछे हंसे न कोय।।[8]

संत घीसादास जी कबीर परमेश्वर द्वारा दिए गए सतनाम मंत्र का जाप करते थे, जिससे उन्हें ज्ञान की प्राप्ति हुई।

राम नाम जप कर थिर होई। ओहम सोहम मंत्र दोई।।

ओम सोहं जपले भाई। राम नाम की यही कमाई।।[9]

राम नाम का निरंतर जाप करने से चंचल मन शांत और स्थिर हो जाता है। यहाँ 'राम' केवल एक नाम नहीं, बल्कि उस परम तत्व का प्रतीक है जो घट-घट में व्याप्त है। वे कहते है कि तुम इस 'सोहम' भाव का जाप करो, क्योंकि जीवन की असली पूँजी और असली कमाई केवल राम नाम का स्मरण ही है। संसार की बाकी सभी वस्तुएँ यहीं रह जाएगी , केवल भक्ति और आत्म-ज्ञान ही साथ जाएगा। घीसा संत की वाणी में हमें व्यंग्यार्थ वाणी का उदाहरण भी देखने को मिलता है। जैसे-

सभी खेल खेलत रहे, पिये तमाखू भाँग।

एक पलक बिसरे नहीं, हृदय हरि का नाम।।

आई गई का शौक था, सो है सन्त सुजान।

घीसा सन्त को यूँ कहैं, सो साधु निष्काम।।[10]

घीसादास के एक पद में नर-नारायणी काया को एक बंगले का रूपक बांध कर प्रस्तुत किया गया है। जो इस प्रकार से हैं-

बंगला खूब बना दरवेश, या जल में अलख पुरुष को देख।

पाँच तत्व का बंगला कीन्हा, त्रिगुण रंग लगाया।

इस बंगले का रहने हारा, फेरि बहुरि नहीं आया।।

इस बंगले के दस दरवाजे, बीच पवन दरवेश।

बिना फिराया बंगला फिरता, बिन धूनी बिन टेक।।

जैसी लकड़ी ढाक की, ऐसा यह तन देख।

वा में केशूरकम रहया, या में पुरुष अलेख।।

बंकनाल घर कमंद लगाकर, जा पहुँचे वा देश।

घीसा सन्त देख लिया बंगला, सब घट साहेब एक।।[11]

इसमें बंग्ला, दस दरवाजे, दरवेश, धूनी, ढाक की लकड़ी, बंकनाल आदि प्रतीकों के माध्यम से वे मनुष्य को बोध करवाते हैं। वे मनुष्य की तुलना बंगले से करते हैं और जनता को चेताने का प्रयास करते हैं कि जिस प्रकार से बंगले में सभी प्रकार की भौतिक सुख सुविधाएं होती हैं, ठीक उसी प्रकार से मनुष्य भी अपनी ज्ञानेंद्रियों से सुखों का भोग करता है तो यही सुख आत्मा और परमात्मा के मिलन में बाधा बनता है। वे मन को ज्ञान के माध्यम से स्थिर रखने की बात भी अपने इस पद में करते हैं और ज्ञान की प्राप्ति के लिए वो गुरु को महत्व देते हैं।

घीसादास के पदों में हमें जाति-पाति का खंडन भी देखने को मिलता है। वे सभी को समान समझते थे और वे किसी भी जाति के लोगों को ऊँच नीच की दृष्टि से नहीं देखते थे। बल्कि वे अपनी वाणियों के माध्यम से इसका जोरदार शब्दों में खंडन करते हुए दिखलाई पड़ते हैं। उनके लिए सभी प्राणी हाड़ मांस के पुतले हैं। सबकी एक ही चमड़ी है, सब में एक ही राम है। न कोई बड़ा है और ना कोई छोटा।

जाट और भाट, भग लिग के ही ठाट,

ब्राह्मण और बणिया, भग लिग के तणिया।

जोगी और गुसाई, भग लिग के ही भाई,

लेना और देना, भग लिग से ही कहना।

पीर और पैगम्बर, भग लिग के ही दिगम्बर,

जती और सती, भग लिग की ही मती।

घीसा हिन्दू और मुसलमान, भय लिग के ही जान।।[12]

घीसादास की वाणियों में हमें बाह्य आडंबरों के प्रति विरोध भी दिखाई पड़ता है। उन्होंने उन कर्मकांडों का विरोध किया जो मनुष्य को ईश्वर से जोड़ने की बजाय उनके रास्ते में अवरोधक का काम करते थे। उन्होंने हिंदू और मुस्लिमों में व्याप्त कुरीतियों का भी अपनी वाणियों के माध्यम से खंडन किया है। वे इन दोनों के बीच के अंतर को मिटाकर एक होने का संदेश देते हुए कहते है कि –

राम खुदा एको है भाई, हृदवी दो ठहराई।

एक हिन्दू एक मुसलमान ये कैसी रोल मचाई।।

उनमे काजी उनमें पंडित दोनों बडे बनाएं।

माया मोह में भूल रहे हैं राम खुदा नहीं पाये।।

लालच खातर साँच न बोलें मर्म उन्हें नहीं पाया।

घर में वस्तु बाहर बतलायें नाहक जग भरमाया।।[13]

संत घीसादास की वाणी लोकवाणी है। इन्होंने अपनी लोक भाषा में वाणियों के माध्यम से अपने ज्ञान को लोगों तक पहुँचाया है। इन्होंने

कोई भी ग्रंथ नहीं लिखा बल्कि इनके शिष्यों ने अपने गुरु घीसादास की वाणी को लिपिबद्ध किया। घीसादास की भाषा पर स्थानीय बोलियों का प्रभाव हमें दिखाई पड़ता है क्योंकि इनकी भाषा का मूल आधार साधुक्कड़ी रहा है। इनका कार्य क्षेत्र हरियाणा और दिल्ली के आसपास का क्षेत्र रहा है। इन्होंने अपनी वाणियों में प्रतीकों के माध्यम से भी अपनी बात को स्पष्ट किया है। इन्होंने आध्यात्मिक रहस्यों को समझाने के लिए रोज़मर्रा की वस्तुओं को प्रतीक बनाया है।

निष्कर्ष:-

अतः निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि भक्ति काल की संत परंपरा में घीसादास का महत्वपूर्ण स्थान हैं। इन्होंने अपनी वाणियों के माध्यम से समाज में व्याप्त बुराइयों व बाह्य आडंबरों का विरोध किया और लोगों को जागृत करने का प्रयास किया। ये कबीर को अपना गुरु मानते थे और उसी मार्ग पर चलते थे। शायद यही कारण है कि आज भी ये एक समाज सुधारक के रूप में विख्यात है। आज भी 'घीसा पंथ' का महत्वपूर्ण स्थान है। इस पंथ का नामकरण संत घीसादास के नाम पर किया गया है जो कि इस पंथ के प्रवर्तक हैं। आज भी हरियाणा में घीसा पंथ के कई महत्वपूर्ण अखाड़े हैं। जहाँ घीसादास की वाणियों को आज भी गाया जाता है। अतः कहा जा सकता है कि घीसादास का संत परंपरा में महत्वपूर्ण योगदान रहा है और अपनी वाणियों के माध्यम से वे हृदय की शुद्धता और सत्य आचरण पर बल देते हुए इसी को सच्चा भक्त बताते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:-

1 ग्रन्थ साहब, संक्षिप्त जीवनलीला, पृष्ठ 9, वाणी 5

2 वही पृष्ठ-9, वाणी 6

3 वही पृष्ठ-109

4 वही पृष्ठ-8

5 वही पृष्ठ-44

6 वही पृष्ठ-1

7 वही पृष्ठ-1

8 वही पृष्ठ-4

9 कबीर दास जी की वाणी

10 ग्रन्थ साहब, संक्षिप्त जीवनलीला, पृष्ठ-33

11 वही पृष्ठ-54,

12 सेंगर, इंद्र, घीसा पंथ एक अवलोकन, हेमंत प्रकाशन, पृष्ठ-33

13 वही पृष्ठ-33